समयसारके भाष्य आत्मख्यातिकी मुद्रित प्रतियोंमें एक महत्त्वपूर्ण पाठमें एकरूपताकी आवश्यकता

पण्डित माणिकचन्द्र चवरे, कारंजा

आचार्यश्री कुन्दकुन्दके समयप्राभृत परमागमके अद्भुत भाष्यकार आचार्यश्री अमृतचन्द्रके आत्मख्याति भाष्यके गाथा सप्तक क्रमांक ३९ का ३५५ जो भाष्य मुद्रित नाना प्रतियोंमें प्रकाशित हुआ है, वह लिपिकारोंके प्रमादसे अन्यान्य रूपमें प्रकाशित हुआ है। उस पाठमें एक धारा नहीं रह पायी। आ० अमृतचन्द्र भाववाही समर्पक रचना तथा शब्दरचनाके लिये पूर्ण समर्थ भावप्रभु और भाषाप्रभु रचनाकार हैं। कहीं भी रचनामें शिथिलता या यद्वातद्वा प्रवृत्ति नहीं है। विकल्पके लिये गुंजायश ही नहीं है। इनका एक-एक शब्द नपा तुला है। पदप्रयोगही नहीं, शब्दप्रयोग, शब्दोंमें अक्षर-प्रयोग तक सूत्ररचनाकी तरह यथास्थान औचित्यपूर्ण ही हैं।

भाष्यका निम्नलिखित एक अंश है जिस पाठमें सुधार होकर भविष्यके प्रकाशनोंमें एक धारा और एकरूपता होना नितान्त आवश्यक है। आशा है विज्ञ प्रशस्त अध्यवसायी और पण्डितगण योग्य निर्णय करेंगे।

बम्बईकी रायचन्द्र जैन शास्त्रमालासे प्रकाशित और महेन्द्रप्रिंटर्स, सराफा (जबलपुर) द्वारा मुद्रित प्रतिमें पृष्ठ ४३७ पर वह पाठ निम्न प्रकार है :

"यथा च स एव शिल्पी चिकीर्षुश्चेष्टानुरूपमात्मपरिणामात्मकं कर्म करोति, दुःखलक्षणमात्मपरिणामात्मकं चेष्टानुरूपं कर्मफलं भुंक्ते च, एकद्रव्यत्वेन ततोऽनन्यत्वे सति तन्मयश्च भवति, ततः परिणाम-परिणामिभावेनतत्रैव कर्तृकर्म-भोक्तृभोग्यभोग्यत्वनिश्चयः।"

"तथाऽत्मापि चिकीर्षुश्चेष्टानुरूपमात्मपरिणामात्मकं कर्म करोति, दुःखलक्षणमात्मपरिणामात्मकं चेष्टानुरूपं कर्मफलं भुंक्ते च, एकद्रव्यत्वेन ततोऽनन्यत्वे सति तन्मयश्च भवति, ततः परिणामपरिणामि-भावेन तत्रैव कर्तृकर्म-भोक्तृभोग्यत्वनिश्चयः।"

बम्बईकी इस प्रतिके पहले मुद्रित प्रतियोंमें तथा अनन्तर प्रकाशित प्रतियोंमें यह अंश भिन्न-भिन्न रूपसे मुद्रित होता गया। उन सब प्रकाशनोंकी तालिका पाठकोंके विचारार्थ संलग्न है। इसे पाठभेद कहनेके लिये हिम्मत नहीं होती। यह मूलमें लिपिकारके प्रमादवश ही यह मुद्रण गलत रूपसे चला आ रहा सा प्रतीत होता है। विचार पूर्वक भविष्यके लिये उसमें सुधारकी अतीव आवश्यकता है। उसमें सुधार किये बिना अर्थमें पूर्णरूपेण यथार्थता नहीं आ सकती। ध्यान देने योग्य पद हैं : चेष्टारूपं "और चेष्टानुरूपं।"

यह प्रकरण कर्ताके सम्बन्धमें है। वह जो कर्म (क्रिया) करता है और जो जो कर्मफल भोगता है, वह किस प्रकारका होता है ? इसे व्यवहार दृष्टि और परमार्थ दृष्टिसे कैसा समझना चाहिये ? यहाँ इसका दृष्टान्तपूर्वक पूर्णरूपेण स्पष्टीकरण किया गया है।

कर्ताके द्वारा किया जाने वाला कर्म (क्रिया-व्यापार) जो जो होता है, वह चेष्टारूप होता है या चेष्टानुरूप होता है, इसका सूक्ष्म विचार पूर्वक निर्णय होना आवश्यक है। विचार करनेपर यह स्पष्ट

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तालिका—१ समयसार गाथा ३४९–३५५ के भाष्यकी भिन्न-भिन्न रूपता

पुस्तिका मुद्रणस्थान	पाठ
बम्बई	दृष्टान्तः — यथा — शिल्पी — चेष्टानुरूपं — कर्म करोति । दुःखलक्षणं — चेष्टानुरूपं कर्मफलं भुंक्ते ।
दिल्ली	दार्ष्टान्तिः— तथा — आत्मा — चेष्टानुरूपं — कर्म करोति । ,, — चेष्टानुरूपं कर्मफलं भुंक्ते ।
सोनगढ़	दृष्टान्तः — यथा — शिल्पी — चेष्टारूपं — कर्म करोति । ,, — चेष्टारूपं कर्मफलं भुंक्ते ।
	दार्ष्टान्तिः— तथा — शिल्पी आत्मा— चेष्टारूपं — कर्म करोति । ,, — चेष्टारूपं कर्मफलं भुंक्ते ।
कलकत्ता	दृष्टान्तः — यथा — शिल्पी — चेष्टानुरूपं — कर्म करोति । ,, — चेष्टानुरूपं कर्मफलं भुंक्ते ।
	दार्ष्टान्तिः— तथा — आत्मा — चेष्टारूपं — कर्म करोति । ,, — चेष्टारूपं कर्मफलं भुंक्ते ।
कारंजा	दृष्टान्तः — यथा — शिल्पी — चेष्टारूपं — कर्म करोति । ,, — चेष्टारूपं कर्मफलं भुंक्ते ।
	दार्ष्टान्तिः— तथा — आत्मा — चेष्टारूपं — कर्म करोति । ,, — चेष्टारूपं कर्मफलं भुंक्ते ।
मेरट	दृष्टान्तः — यथा — शिल्पी — चेष्टानुरूपं — कर्म करोति । ,, — चेष्टानुरूपं कर्मफलं भुंक्ते ।
(मूलमात्र)	दार्ष्टान्तिः— यथा — आत्मा — चेष्टारूपं — कर्म करोति । ,, — चेष्टानुरूपं कर्मफलं भुंक्ते ।
सम्भाव्य	दृष्टान्तः — यथा — शिल्पी — चेष्टारूपं — कर्म करोति । ,, — चेष्टानुरूपं कर्मफलं भुंक्ते ।
पाठ	दार्ष्टान्तिः— तथा — आत्मा — चेष्टारूपं — कर्म करोति । ,, — चेष्टानुरूपं कर्मफलं भुंक्ते ।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

दृष्टिमें आ सकता है कि जो जो क्रिया-व्यापार होता है, वह स्वयं चेष्टारूप ही होता है न कि चेष्टानुरूप। क्योंकि क्रिया-व्यापारसे भिन्न चेष्टा कोई स्वतन्त्र वस्तु नहीं होती। अतः दृष्टान्त और दार्ष्टान्त दोनों जगह पर—

"चेष्टारूपमात्मपरिणामात्मकं कर्म करोति।"

ऐसा ही पाठ निर्दोष प्रतीत होता है। यहाँ 'चेष्टानुरूपमात्मपरिणामात्मकं कर्मकरोति' यह पाठ ठीक नहीं मालूम होता। आ० अमृतचन्द्रकी रचनाका अध्ययन और प्रकरणका मनन करनेके अनन्तर सहज ही यह ख्यालमें आवेगा। चेष्टा कोई अलग-पृथक् हो और क्रिया-व्यापार रूप कर्म कोई स्वतंत्र हो, ऐसा नहीं है। अतः 'चेष्टाके अनुरूप इस अर्थमें शब्द प्रयोग कोई अर्थ नहीं रखता। इस प्रकार कर्म (क्रियाव्यापार रूप) का खुलासा करते समय 'चेष्टानुरूपमात्मपरिणामात्मकं कर्मफलं भुंक्ते'—ऐसा पाठ होना चाहिये। क्योंकि सुख-दुख-रूप जो जो कर्मफल होता है, वह पूर्वमें किये गये भले-बुरे (चेष्टारूप) कर्मके अनुरूप होता है। फल कोई चेष्टारूप नहीं होता। ऐसी मेरी धारणा है। यदि माना भी जावेगा, तो कर्मके स्वरूपमें और कर्मफलके स्वरूपमें अन्तर नहीं रहेगा। अतः कर्मको सुनिश्चित रूपसे चेष्टारूपं और कर्मफलका स्वरूप स्पष्ट करते समय चेष्टानुरूपं ऐसा प्रयोग दृष्टान्त और दार्ष्टान्त-दोनों जगहपर करना योग्य होता। और ऐसा पाठ बम्बई-दिल्ली तथा मेरठकी (सार्थ) नयी प्रतिमें मुद्रित भी है।

तालिकाको सूक्ष्मतासे देखनेसे यह सहज स्पष्ट हो जावेगा कि मुद्रित प्रतियोंमें एकरूपता नहीं है। मैं आशा करता हूँ कि विज्ञ अध्यवसायी पण्डितगण इस विषयमें अपना अभिप्राय तथा मनन प्रगट करनेका अनुग्रह करेंगे और प्रकाशक सावधानी पूर्वक आगामी आवृत्तियोंमें सुधार अवश्य करेंगे। जिससे अर्थग्रहणमें निर्दोषता आवेगी। रसहानि तथा अर्थहानि भी नहीं होगी। क्या ही अच्छा होगा यदि आत्मख्याति के तालबद्ध-लयबद्ध अद्भुतगद्य अंशका भी प्राचीन शुद्ध प्रतियोंके आधारसे शुद्ध संस्करण हो।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org